International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 7 Issue 9, September- 2017,
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939|

वैदिक साहित्य में शिक्षा

***डॉ0 गिरीश चन्द्र पाठक**

भारतीय संस्कृति, विश्व की प्राचीन एवं महान संस्कृतियों में से एक है। इसके उद्भव काल के सम्बन्ध में भारतीय एवं विदेशी विद्वानों में भले ही मतैक्य न हो, परन्तु इसकी प्राचीनता एवं महानता पर सभी एकमत हैं। वैदिक साहित्य, जिसमें श्रुति एवं स्मृति साहित्य समाहित है, ज्ञान का एक ऐसा भंडार हैं जो न केवल भारतवासियों के लिए अपितु सम्पूर्ण विश्व के लिए हजारों वर्षों से सूचना, ज्ञान, शिक्षा एवं प्रेरणा का एक महान स्रोत बना हुआ है। इसमें मनुष्य की भौतिक एवं आध्यात्मिक प्रगति, दोनों के लिए उपयुक्त मार्ग दर्शन प्रदान किया गया हैं। वास्तव में यो वैदिक दर्शन के सर्वोत्कृष्ट और सर्वोच्च ज्ञान को प्रदर्शित करते हैं।

वैदिक साहित्य के अन्तर्गत श्रुति एवं स्मृति साहित्य को सम्मिलित किया जाता हैं। श्रुति साहित्य, वैदिक के साहित्य का वह भाग हैं जो हिन्दू मान्यता के अनुसार ईश्वर द्वारा कुछ विद्वान, मनीषियों को बताया गया और बाद में इन मनीषियों ने उस ज्ञान को पीढ़ी दर पीढ़ी पहुँचाया। इस साहित्य की रचना किसी सांसारिक व्यक्ति द्वारा नही की गयी है, और इसे अत्यधिक पवित्र साहित्य माना जाता हैं। स्मृति साहित्य की रचना ऋषियों द्वारा अपनी स्मृति के आधार पर की गयी। इसमें वेदांत और उपवेद सम्मिलित हैं।

वेदों को ईश्वर की वाणी समझा जाता है। ऋषियों एवं मनीषियों ने वेदों में निहित ज्ञान को तप, साधना द्वारा प्राप्त किया तथा गहन चिंतन किया। वेदों में सभी प्रकार का ज्ञान अंतनिर्हित है और ये, समस्त कला एवं विज्ञान की मूलभूत जानकारी प्रदान करते हैं। वास्तव में ये ज्ञान एवं विवेक के प्राथमिक स्रोत हैं। इनमें मानव जीवन के समस्त पहलुओं का समावेश हैं। वेदों में उच्च कोटि के आदर्शों और मूल्यों का समावेश हैं। वेद शब्द की व्युत्पत्ति, संस्कृत के विद धातु से हुई है जिसका अर्थ है – (क) जानना, (ख) होना, (ग) प्राप्त करना, (घ) विचार करना, (ङ) कहना एवं (च) निवास करना।

वेदों का अभिप्राय है ईश्वर तथा इस भौतिक संसार को जानना, अन्य प्राणियों एवं प्रकृति के साथ सामजंस्य, ईश्वर के साथ एकात्मकता स्थापित करना। निम्न भौतिक सत्ता से विमुक्त होकर, उच्च आध्यामिक सत्ता के साथ, एकाकार की स्थिति प्राप्त करना तथा प्रसन्न, स्वस्थ्य एवं नेक जीवन जीना। साथ ही सबके लिये सद्भावना रखना तथा अपनी आत्मा की गहराई को समझना तथा प्रकृति की विशालता में विश्वास करना। वेदों की विषय वस्तु पर निगाह डालने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उनकी यह अत्यन्त व्यापक है और मनुष्य के दैनिक जीवन से पूर्णतया सम्बन्धित है तथा ये मानव के लिये आवश्यक सभी ज्ञान प्रदान करते हैं।

वैदिक साहित्य में चार वेदों का वर्णन है जो ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद हैं।

ऋग्वेद :– ऋग्वेद को चारों वेदों में सबसे प्राचीन माना जाता हैं। इसको दो प्रकार से बांटा गया है। प्रथम

प्रकार में इसे 10 मण्डलों में विभाजित किया गया है। मण्डलों को सूक्तों में, सुक्त में ऋचायें होती है। कुल ऋचायें 10520 हैं। इस प्रकार ऋग्वेद में 64 अध्याय हैं। आठ–आठ अध्यायों को मिलाकर अष्टक बनाया गया है, ऐसे कुल आठ अष्टक है। फिर प्रत्येक अध्याय को वर्गों में विभाजित किया गया है। वर्गों की संख्या, भिन्न–भिन्न अध्यायों में भिन्न–भिन्न है। कुल वर्ग संख्या 2024 हैं। प्रत्येक वर्ग में कुछ मंत्र होते हैं। सृष्टि के अनेक रहस्यों का इसमें उद्घाटन किया गया है।

यजुर्वेद : यजुर्वेद में गद्य एवं पद्य दोनों है। इसमें यज्ञकर्म की प्रधानता है। प्राचीन काल में इसकी 101 शाखायें थी परन्तु वर्तमान में केवल पाँच शाखायें हैं । काठक, कपिष्ठल, मैत्रायणी तैत्रिरीय एवं वाजसनेयी। इस वेद के दो भेद है :– कृष्ण यजुर्वेद एवं शुक्ल यदुर्वेद। इसमें 40 अध्याय, 303 अनुवाक एवं 1975 मंत्र है।

सामवेद – यह गेय ग्रन्थ है। इसमें गान विद्या का भण्डार है। यह भारतीय संगीत का मंत्र है। ऋचाओं के गायन को ही साम कहते है। इसकी 1001 शाखायें थी परन्तु आजकल तीन कौथमीय, जैमिनीय और राणायनीय ही प्रचलित है। इसको पूर्वाचिक एवं उत्तरार्चिक में बांटा गया है। पूर्वाचिक में चार काण्ड है – आग्नेय काण्ड, ऐन्द काण्ड, पवमान काण्ड एवं आरण्य, काण्ड। चारों काण्ड में कुल 640 मंत्र हैं। फिर महानाम्न्यार्चिक के 10 मंत्र है। छः प्रपाठक है। उत्तरार्चिक को 21 अध्यायों में बांटा गया है। नौ प्रपाठक हैं। इसमें कुल 1225 मंत्र है। इस प्रकार सामवेद में कुल 1875 मंत्र है। इसमें अधिकांश मंत्र, ऋग्वेद से लिये गये हैं। इसे उपासना का प्रवर्तक कहा जाता है।

अथर्ववेद :– इसमें गणित, विज्ञान, आयुर्वेद, समाजशास्त्र, कृषि विज्ञान आदि अनेक विषय वर्णित है। यह वेद, जहां ब्रह्म ज्ञान का उपदेश देता है, वही मोक्ष का उपाय भी बताता है। यह 20 काण्डों में विभक्त हैं। प्रत्येक काण्ड में कई–कई सूत्र हैं और सूत्रों के मंत्र है। इस वेद में कुल 5977 मंत्र है। अथर्ववेद का विद्वान चारों वेदों का ज्ञाता होता है। यज्ञ में ऋग्वेद का होता, देवों का आवाहन करता है, सामवेद का उद्वाता, सामगान करता है, यजुर्वेद का अध्वर्यु देव, कोटी कर्म का वितान करता है, तथा अथर्ववेद का बह्म, पूरे यज्ञकर्म पर नियंत्रण रखता है।

वेदांग वे सहायक ग्रन्थ है जो वेदों में निहित शब्दों का सही रूप से उच्चारण करने एवं अर्थ समझने में सहायता करते हैं। वेदांग में उपनिषद, स्मृति, महाकाव्य, भागवत्गीता ब्राह्मण पुराण सम्मिलित है। कुल छः वेदांग है–

1. शिक्षा : इसमें वेद मंत्रों के उच्चारण की विधि बतायी गयी है।
2. कल्प : वेदों के किस मंत्र का प्रयोग, किस कर्म में करना चाहिये, इसका कथन किया गया है। इसकी तीन शाखायें है श्रौतसूत्र, गृहसूत्र और धर्मसूत्र
3. व्याकरण : इससे प्रकृति एवं प्रत्यय आदि के योग, शब्दों की सिद्धि और उदात्त, अवदान तथा स्वरित स्वरों की स्थिति का बोध होता है।

4. निरूक्त : वेदों में जिन शब्दों का प्रयोग जिन–जिन अर्थों में किया गया है, उनके उन–उन अर्थों का निश्चयात्मक रूप से उल्लेख, निरूक्त में किया गया है।
5. ज्योतिष : इससे वैदिक यज्ञों एवं अनुष्ठानों का समय ज्ञात होता है। यहाँ ज्योतिष से मतलब वेदांग ज्योतिष से है।
6. छन्द : वेदों में प्रयुक्त उष्षिक आदि छन्दों की रचना का ज्ञान, छन्दशास्त्र से होता है।

ब्राह्मण :– ब्राह्मण, व्याख्यात्मक टिप्पणियाँ हैं जो वेदों की विषय वस्तु को सरल करने के लिये लिखे गये हैं। प्रत्येक वेद के अपने ब्राह्मण है। ब्राह्मण, वैदिक काल के सांस्कृतिक, राजनीतिक और सामाजिक जीवन के बारे में महत्वपूर्ण सूचनायें भी प्रदान करते हैं। वेदों के आधार पर ब्राह्मण, दैनिक कर्त्तव्यों को स्पष्ट करते हैं। ज्ञात ब्राह्मण है –

1. ऋग्वेद से सम्बन्धित ऐतरेय ब्राह्मण
2. यर्जुवेद से सम्बन्धित शतपथ ब्राह्मण
3. सामवेद से सम्बन्धित साम ब्राह्मण
4. अथर्ववेद से सम्बन्धित घोपालय ब्राह्मण

इनमें शतपथ ब्राह्मण सबसे महत्वपूर्ण है। यह उस समय के मानव जीवन और समाज, लगभग सभी पहलुओं पर प्रकाश डालता है।

उपनिषद : उपनिषद, दो शब्दों उप एवं निषद दो शब्दों के मेल से बना है। उप का अर्थ निकट एवं निषद का अर्थ है बैठना। अतः उपनिषद का अर्थ है छात्र का अपने आध्यात्मिक गुरू के निकट दिव्य उपदेश के लिये बैठना। वैदिक साहित्य में वेदों के बाद उपनिषदों का महत्व है। उपनिषद संतों एवं ऋषियों द्वारा रचित ग्रन्थ हैं। इसमें मुख्य रूप से आत्मा एवं परमात्मा तथा उनके मध्य के परस्पर सम्बन्ध की चर्चा की गयी है। स्मृति में उपनिषदों की संख्या 108 बतायी गयी है परन्तु इनमें से ग्यारह उपनिषद मुख्य है –

1. ईश उपनिषद 2. केन उपनिषद 3. कठ्उपनिषद 4. प्रश्न उपनिषद 5. मुडक उपनिषद6. मांडक्योपनिषद, 7. छादोग्य उपनिषद 8. वृहदारण्यक उपनिषद9. ऐतरेय उपनिषद 10. तैत्तिरीय उपनिषद 11. श्वेताश्वतर उपनिषद

स्मृति : स्मृतियों में मानव जीवन के आचारण के नियमों को निर्धारित किया गया हैं। महान विचारक आदि मनु विश्व के पहले नियम निर्माता थे। तीन स्मृतियाँ प्रमुख है –

1. आदि मनु द्वारा रचित मनुस्मृति।
2. महर्षि याज्ञवलक्य द्वारा रचित याज्ञवल्क्य स्मृति।
3. ऋषि पराशर द्वारा रचित पराशर स्मृति।

मनुस्मृति में, हिन्दुत्व के चरित्र और उसकी मूलभावना को निरूपित किया गया है। विभिन्न विषयों, जैसे प्रशासन, कूटनीति, शिक्षा, विधि आदि के अतिरिक्त मनुस्मृति में महिलाओं की स्थिति पर भी विस्तृत चर्चा की गयी है।

पुराण :– वेद में निहित ज्ञान के अत्यन्त गूढ़ होने के कारण, आम जनमानस के द्वारा उन्हें ग्रहण कर पाना कठिन था अतएव रोचक कथाओं के माध्यम से वेद के ज्ञान की जानकारी, देने की प्रथा चली। इन्ही कथाओं के संकलन को पुराण कहा जाता है। पौराणिक कथाओं में ज्ञान, सत्य घटनाओं तथा कल्पना का संमिश्रण होता है। पुराणों की संख्या 18 मानी गयी है।

1. ब्राह्म पुराण
2. पद्म पुराण
3. विष्णु पुराण
4. शिव पुराण
5. श्रीमद् भागवत पुराण
6. नारद पुराण
7. मारकण्डेय पुराण
8. अग्नि पुराण
9. भविष्य पुराण
10. ब्राह्म वैवर्त पुराण
11. लिंग पुराण
12. वाराह पुराण
13. स्कन्द पुराण
14. वामन पुराण
15. कूर्म पुराण
16. मत्स्य पुराण
17. गरूङ पुराण
18. ब्रह्माण्ड पुराण

इसके अतिरिक्त 18 उपपुराणों का उल्लेख मिलता हैं। पुराणों में सृष्ट्रिक्रम, राजवंशावली, मन्वन्तर क्रम, ऋषि वंशावली, पंचदेवताओं की उपासना, तीर्थों, व्रतों, दानों का महात्म्य का विस्तार से वर्णन है। इस प्रकार पुराणों में, हिन्दू धर्म का विस्तार से ललित रूप में वर्णन किया गया है।

महाकाव्य : दो महाकाव्य, वाल्मीकि कृत रामायण एवं वेदव्यास कृत महाभारत, हिन्दूओं के सर्वाधिक लोकप्रिय ग्रंथ है जो लोगों को आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक व्यवस्था की सम्पूर्ण जानकारी देते हैं। डॉ0 आर0सी0 मजूमदार के शब्दों में ''रामायण एवं महाभारत ने भारतीयों के चरित्र एवं सभ्यता को जिस प्रकार से एक साचें में डाला है, वैसा विश्व के किसी भी भाग में, किसी भी साहित्यिक कृति द्वारा नही किया गया है।'' भगवतगीता सात सौ श्लोकों का एक लघु ग्रन्थ है। इन श्लोकों को अठारह अध्यायों में विभाजित किया गया है। यह एक पद्य ग्रन्थ है जो महाभारत युद्ध के प्रसिद्ध सेनानायक अर्जुन एवं भगवान विष्णु के अवतार श्री कृष्ण के मध्य संवाद के रूप में है। गीता में निहित–दर्शन का सार यह है कि हमें अपने मन के दृढ़ विश्वास के साथ फल की ईच्छा किये, बगैर कर्म निष्ठ होकर, ईमानदारी से, अपने कर्तव्यों का निर्वाह करना चाहिये। हमें न्याय एवं उचित उद्देश्य के लिये अवश्य संघर्ष करना चाहिये।

भारतीय वैदिक साहित्य में जीवन के विभिन्न पक्षों पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। शिक्षा के सम्बन्ध

में भी वेदों, उपनिषदों में विस्तृत ढंग से व्यवस्था का वर्णन है।

विद्या का महत्व : वैदिक साहित्य में विद्या (शिक्षा) को मानव के लिये बहुत महत्वपूर्ण बताया गया है।

न ता नशान्ति न दभाति तस्करो ना सामामित्रों व्यथिरो दधर्षति।

देवांश्च याभिर्यजते ददाति च ज्योगित्ताभिः सचते गोपतिःसह।।

अ0 4/21/3

विद्यायें कभी नष्ट नही होती हैं। यह अनश्वर धन है। विद्या–धन को कोई चोर चुरा नही सकता। दुखदायी शत्रु भी इसका तिरस्कार नहीं कर सकतें। विद्या–धन वह धन है जिसके द्वारा देवयज्ञादि पंच्चयज्ञ किये जाते हैं एवं जिसका दान सर्वोत्तम होता है। इन्द्रियों के स्वामी जीवात्मा गोपति का निरन्तर इस विधा के साथ सम्बन्ध रहता है अर्थात् मरने पर जीवात्मा के साथ केवल, विद्या–धन ही साथ जाता है, अन्य सारे सांसारिक ऐश्वर्य यही रह जाते हैं।

प्राणाय भूरिधायसे उभसचे। अ0 6/41/2

विद्या मानव को जीवन–शक्ति, प्राण शक्ति, यश एवं प्रतिष्ठा देती है।

कामधेनुगुणा विद्या ह्मकाले फलदायिनी।

प्रवासे मातृसदृशी विद्या गुप्तं धने स्मृतम्।। चा0 4/5

विद्या में कामधेनु के समान गुण है। यह असमय में भी फल देने वाली है, यह विदेश में माता के समान रक्षक एवं हितकारिणी है इसलिये विद्या को गुप्त छिपा हुआ धन कहा गया है।

विद्यामित्रं प्रवासेषु भार्या मित्रं गृहेषु च।

व्याधितस्योसघं मित्रां धर्मों मित्र मृतस्य च।। चा0 5/15

विदेशों में विद्या, मनुष्य का सच्चा मित्र होना है। घर में शील–गुण युक्त नारी मनुष्य की वास्तविक मित्र होती है। रोगी के लिये औषधि मित्र होता है और मरे हुये मनुष्य के लिये मित्र उसका धर्म होता है।

असतो मा सद्वमय।

तमसो मा ज्योतिर्गमय

मृत्योर्माऽमृत ंगमय।।

वृहदारण्यक उपनिषद 1.03.28

मुझे असत्य से सत्य की ओर ले चलों। अधंकार से प्रकाश की ओर ले चलो और मृत्यु से अमरत्व की ओर ले चलों।

अद्विर्गात्राणि शुद्वध्यान्ति मनः सत्येन शुद्वध्यति।

विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धि ज्ञानेन शुद्वध्यति।।

मनु 5/109

जल से शरीर की शुद्धि होती है, मन सत्य से शुद्व होता है। विद्या एवं तप से आत्मा की शुद्वि होती है

और बुद्धि ज्ञान से शुद्व होती है।

प्राणाय भूरिधाय से, उरूव्यचे.....अ0 6/41/2

विद्या मानव को जीवन शक्ति, प्राण शक्ति, यश एवं प्रतिष्ठा देती है।

रायस्पोषं यजमानाय धेहि.....अ0 18/1/43

विद्या योगक्षेम प्रदान करती है।

रयिमक्षीय माणम्। अ0 7/20/3

यह मानव को अक्षय वैभव और श्री प्रदान करती है।

अदब्धेन ब्राह्मणा वावृधानः।

अ0 17/1/12

ज्ञान अघर्षणीय है। इससे सदा प्रगति एवं वृद्धि होती है।

विद्या ह वै ब्राह्मणमा जगाम, गोपाय मा शेवधिष्टेऽहयस्मि।
असूयकायाऽनृजवेऽयताय, न मा ब्रूया वीर्यवती तथा स्याम्।।
यमेव विधाः शुचिमप्रमत्तं, मेधाविनं ब्रह्मचर्यौ पपन्नम्।
यस्ते न द्रुद्येत् कतमच्चनाह, तस्मै मा ब्रूया निधिपाय ब्रह्मान

निरूक्तं 2/4

आचार्य यास्क के अनुसार विद्या एक बहुमूल्य निधि है। इसकी सुरक्षा विद्वानों को करनी चाहिये। जो गुरूद्रोही, कुटिल प्रवृति, ईष्यालु, परछिद्रान्वेसी और असंयमी है उनको उच्च शिक्षा न दी जायें।

शिक्षा का उद्देश्य : वैदिक संस्कृति के अनुसार मनुष्य का सर्वांगीण विकास वांछनीय है। शरीर, मन और आत्मा, इहलोक एवं परलोक, भौतिक सुख एवं आध्यात्मिक सन्तोष सभी क्षेत्रों में एक साथ उन्नति द्वारा मनुष्य अपनी वास्तविक उन्नति कर सकता है। मनुष्य जहाँ धर्म, अर्थ एवं काम को प्राप्त कर सकता है, वही साथ ही साथ अन्तिम लक्ष्य, मोक्ष प्राप्ति को मानता है। केवल अर्थ एवं काम या केवल मोक्ष की प्राप्ति में तत्पर होकर मनुष्य अपनी उन्नति नही कर सकता है। धर्म पर चलकर, अर्थ की उपलब्धि करने धर्मानुसार, काम का सेवन करने तथा मोक्ष को अन्तिम लक्ष्य बनाकर ही मनुष्य अपनी सर्वांगीण विकास कर सकता है, वैदिक साहित्य का यही सार है।

1. वर्धयैंन ज्योतियैन महते सौभगाय। संशितं चित् संतरं सं शिशाधि अ0 7/16/1

ज्ञान ज्योति प्रज्वलित करना :–ऋग्वेद में शिक्षा का उद्देश्य बताया गया है अज्ञानी को ज्ञान ज्योति प्रदान करना, उसके अज्ञानान्धार को दूर करना, निष्क्रिय एवं निष्चेष्ट को सक्रिय एवं सचेष्ट बनाना तथा प्रबुद्ध बनाना।

2. **लोकहितकारी सद्बुद्धि देना** :– यजुर्वेद में कहा गया है कि शिक्षा के द्वारा ऐसी सुमति प्राप्त हो जो विश्वजनीन हो जिससे संसार का कल्याण कर सकें।

आहं वृणे सुमतिं विश्वजन्याम्

यजु0 17/74

3. **अध्यात्म और भौतिकवाद में समन्वय की क्षमता विकसित करना** :– वेद अध्यात्म एवं भौतिकवाद में समन्वय का समर्थन करते है। यजुर्वेद एवं ईश उपनिषद का कथन है कि केवल भौतिकवाद या प्रकृतिवाद, अनर्थ का कारण है और केवल अध्यात्म उससे भी अधिक अनर्थकारी है, अतः जीवन के समन्वित विकास के लिये, दोनों का समन्वय अभिष्ट है। भौतिकवाद जीवन की ज्वलन्त समस्याओं को हल करता है और अध्यात्म, अमरत्व एवं आत्मिक शान्ति प्रदान करता है।
4. **चरित्र निर्माण** :– वैदिक साहित्य में शिक्षा का उद्देश्य, चरित्र निर्माण सत्यनिष्ठा का विकास एवं सत्याचारण की आदत डालना बताया गया है। साथ ही असत्य, झूठ, छल प्रपंच आदि का परित्याग भी इसमें सम्मिलित है। जब तक चारित्रिक शुद्धि एवं परिष्कार नही होगा, तब तक विधा फलीभूत नही होगी। यजुर्वेद में कहा गया है कि मैं असत्य को छोड़कर, सत्य को अपनाता हूँ।

इदमहम् अनृतात् सत्यमुपैमि।

यजु0 1/5

5 **ज्ञान एवं कर्म का समन्वय सिखाना** :– वैदिक साहित्य में कहा गया है कि शिक्षा वही सफल होती है जिसमें कर्मठता की शिक्षा दी जाती है। प्रगतिशील, कर्मठ एवं सतत् संघर्षशील बनाना शिक्षा की लक्ष्य है। अथर्ववेद में कहा गया है कि मेरी बुद्धि सदा कर्मठ रहे। देवता पुरूषार्थी को चाहते है अकर्मण्य को नही।

6 **बुद्धि का परिष्कार एवं बौद्धिक विकास** :– अथर्ववेद का कथन है कि शिक्षा का उद्देश्य है कि व्यक्ति की बुद्धि को विकसित करना, उसे परिष्कृत करना, उसे तीक्ष्ण बनाना, उन्नति की ओर ले जाना और महान सौभाग्य प्राप्त करना।

डॉ0 राधा कमल मुखर्जी के अनुसार ''ज्ञान प्राप्ति केवल ज्ञान प्राप्ति, के लिये नहीं थी, और न धर्म का एक अंग ही थी, वरन् इसका प्रमुख उद्देश्य जीवन का चरम लक्ष्य, 'मुक्ति' प्राप्त करना था।''

डॉ0 ए0एस0 अल्तेकर ने लिखा है कि ''ईश्वर भक्ति एवं धार्मिक भावना, चरित्र–निर्माण, व्यक्तित्व विकास, नागरिक एवं सामाजिक मूल्यों का विकास सामाजिक दक्षता का विकास राष्ट्रीय संस्कृति का प्रचार एवं संरक्षण प्राचीन भारतीय शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य तथा लक्ष्य थे।''

शिक्षा से सम्बन्धित संस्कार :– वैदिक साहित्य में :– पूर्ण व्यक्तित्व के विकास, मानव को श्रेष्ठ बनाने के लिये, परिवार, समाज, देश तथा विश्व में सुख–शान्ति के लिये विभिन्न संस्कारों का विधान किया गया है जिसमें से कुछ शिक्षा से सम्बन्धित है।

उपनयन संस्कार :– उपनयन का अर्थ है समीप ले जाना। विद्या अध्ययन के लिये बालक को आचार्य के पास ले जाना ही उपनयन हैं। उपनयन संस्कार से बालक की शिक्षा–दीक्षा की प्रक्रिया की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है। उपनयन के पश्चात ही व्यक्ति द्विजत्व का अधिकारी हो सकता है। द्विज उसे कहा जाता है जिसका दूसरा जन्म हुआ हो। बालक का पहला जन्म तो माता–पिता के द्वारा होता है। आचार्य के गुरूकुल रूपी गर्भ में विकसित होकर दूसरा जन्म प्राप्त करता है। इस संस्कार में गुरू, बालक को यज्ञोपवीत धारण कराता है।

यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यवसहजं पुरस्तात।
आयुष्यमग्रयं प्रतिमुंच शुभ्रं। यज्ञोपवीतं बलमस्तुतेज।

ब्रह्मोपनिषद

उपनयन का एक अर्थ यह भी लिया जाता है कि आचार्य, शिष्य को भौतिक नयनों के अतिरिक्त ज्ञानरूपी एक नयन और देता हैं। इस संस्कार के समय, आचार्य, अपने शिष्य से कहता है कि मै तुम्हारे हृदय को अपने हृदय में लेता हूँ। तुम्हारे चित्त को अपने चित्त में लेता हूँ। यज्ञोपवित्र के तीन धागे, तीन ऋणों के प्रतीक है। ये ऋण, देव ऋण, ऋषि ऋण तथा पितृ ऋण है। यज्ञोपवित्र धारण करते ही, शिष्य पर इन ऋणों को चुकाने का उत्तरदायित्व जा जाता है। उपनयन संस्कार के साथ ही वेदारम्भ संस्कार भी किया जाता है। इस संस्कार में आचार्य अपने शिष्य को गायत्री मंत्र का उपदेश देता है। गायत्री मंत्र में किसी सांसारिक वस्तु की कामना न करके सद्बुद्धि की कामना की गयी है।

समावर्तन संस्कार :– यह संस्कार गुरूकुल में शिक्षा की समाप्ति पर होता था। इस संस्कार के पश्चात विद्यार्थी स्नातक हो जाता था।

युवा सुवासाः परिवीत आगात स नु श्रेयान भवति जायमानः।
तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः ऋग्वेद

युवा पुरूष, उत्तम वस्त्रों की धारण किये हुये, सब विद्या से प्रकाशित, जब गृहाश्रय में आता है, तो वह प्रसिद्ध होकर, श्रेय, मंगलकारी शोभायुक्त होता है।

समावर्तन संस्कार द्वारा गुरू अपने शिष्य को इन्द्रीय निग्रह, दान, दया और मानव कल्याण की शिक्षा देकर उसे गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करने की आज्ञा प्रदान करते थे। वे कहते थे कि उत्तिष्ठ, जाग्रत, प्राप्य वरान्नि बोधक अर्थात उठो, जागो और छूरे की धार से भी तीखे जीवन के श्रेष्ठ पथ को पार करो।

आचार्य अपने शिष्य को निर्देश देता था–

सत्यं वद। धर्मचर। स्वाध्यायात–मा प्रमदः।
मातृ देवोभवः। पितृदेवो भव।

यानि–अनवधानि कर्माणि तानि सेवितव्यानि। नौइतराणि

तै उप0 1/11/1–2

सदा सत्य बोलना और धर्मयुक्त आचरण करना। स्वाध्याय में कभी प्रमाद न करना। देवयज्ञ एवं पितृयज्ञ अवश्य करना। गुरू के अच्छे आचरण का अनुकरण करना अन्य का नहीं दान देना, अतिथि सत्कार करना, कर्तव्य के विषय में सन्देह हो तो विद्वानों की राय लेना।

शिक्षक : वैदिक साहित्य में शिक्षक अर्थात् गुरू को बहुत ऊचाँ स्थान दिया गया है। गुरू अपने शिष्यों को अपनी सन्तान मानते थे। ऐसा माना जाता था कि माता–पिता ने तो शरीर देकर जीवधारी बनाया है परन्तु गुरू उसे मनुष्यत्व एवं उससे भी ऊपर देवत्व की ओर ले जाता है। गुरूकुल में प्रवेश के पश्चात गुरू अपने छात्र के मानसिक, नैतिक और शारीरिक विकास का पूरा ध्यान रखते थे।

गुरू का कर्त्तव्य केवल विद्याध्ययन ही नहीं था, अपितु उसका धर्म था कि वह प्रत्येक शिष्य को सदाचारी उसके आचरण की रक्षा करें तथा उसके चरित्र का गठन करें। वैदिक साहित्य में आचार्य के निम्नलिखित गुणों का वर्णन है – सदाचारी हो, दूरदर्शी हो तत्वदर्शी हो, छात्रों की जिज्ञासा शान्त करने वाला हों, मननशील हों, अभिमान रहित हों संयमी हों, ब्रह्मचर्य के नियमों का पालन करने वाला हों, अर्न्तज्योति जाग्रत रहें, भाषा पर अधिकार हो प्रसन्नचित एवं रहने वाला हों।

वेधा अदृप्तो अग्निर्विजावन् उधर्न गोनां स्वाद्मा पितूनाम। पिता पुत्र सन्।

ऋग 1/69/1 एव 2

शिष्यों के चरित्र का निर्माता, अभिमान से रहित, अग्नि के समान तेजस्वी, विविध विषयों का ज्ञाता, गाय के थन के समान ज्ञानरूपी दूध देने वाला हो, विषय को स्वदिष्ट बना देने वाला हो, अपने आचार्यो का पुत्रवत् शिष्य होने पर भी उच्च योग्यता के द्वारा अपने आचार्यों से अधिक योग्य होकर उनके द्वारा भी सम्मान प्राप्त करें।

आचार्य ब्रह्मचारी हो। अ0 11/51/6

ऋषि र्विप्रो विचक्षण :– आचार्य, तत्वदर्शी, विप्र और विवेकशील होता है। ऋ0 8/3/3

वाक तत्ववित् आचार्य वाक्तत्व के रहस्यो को जानता है।

कविम् अद्वयन्तम प्रचेतसम् अमृतं सुप्रतीकम् ऋ0 3/29/5

शिक्षक दूरदर्शी हो, व्यापक दृष्टिकोण वाला, संशययुक्त विचारों से मुक्त, प्रबुद्ध विचारों वाला हो, दिव्य चरित्र वाला हो और सदा प्रसन्नचित रहे।

आचार्य : कस्मात् ? आचार्य आचार ग्राह्यति।

आचिनोति–अर्थान्। आचिनोति बुद्धिम् इति वा।

निरूक्त 1/4

आचार्य यास्क के निरूक्त में आचार्य के ये गुण बताये गये है वह आचार (सदाचार) की शिक्षा देता है, वह

शिष्यों के लिये जीवनोपयोगी विषयों का संकलन करता है, वह छात्रों की बुद्धि को विकसित करता है।

आचार्य के कर्त्तव्य :–

- **वर्धयैन ज्योतियैन संशितं चित् संतरं सं शिशाधि** अ0 7/16/1 आचार्य का कर्त्तव्य है कि शिष्यों में विद्या के प्रति रूचि बढ़ाये उनकी बुद्धि को प्रखर करें, उन्हें ज्ञान ज्योति दे। उनकी बुद्धि को प्रखर बनाते हुए उसे अत्यन्त तिक्ष्ण बनाये जिससे वे कठिन से कठिन विषयों को आत्मसात कर सकें।
- **केतुं कृणवन अकेतवे, पेशो मर्या अपेशसे** ऋ0 1/6/3 शिक्षक का कर्त्तव्य है कि अज्ञानी को ज्ञान दे, उसमें ज्ञान की ज्योति प्रकाशित करें। उनकी अकर्मण्यता एवं निर्जीवता को समाप्त करके उनमें शक्ति का संचार करें।
- **आचार्यस्ततक्ष उर्वी गम्भीरे पृथ्वीं दिवंच** अ0 11/5/8 आचार्य आकाश एवं पृथ्वी के वैज्ञानिक रहस्यों का ज्ञान स्वयं प्राप्त करें और शिष्यों को उन रहस्यों को बनाये।
- **शिक्षानरः प्रदिवो अकामकर्शनः** अ0 20/21/2

अथर्ववेद में कहा गया है कि शिक्षक, छात्रों की जिज्ञासाओं का समुचित समाधान करें न कि डरा धमका कर उसे दबाने का प्रयास करें।

- ब्रह्म जिन्वतम् उत जिन्वतं धियः ऋ0 8/35/16 शिक्षक का कर्त्तव्य हैं कि वह शिष्य के ज्ञान को विकसित करें एवं बुद्धि को प्रखर बनाये।

शिष्य के गुण :– वैदिक साहित्य में शिष्य के गुणों का सम्यकं वर्णन किया गया है। आचार्य प्रवेश के पूर्व, विद्यार्थी को तीन दिन परीक्षण में रखता था। जो विद्यार्थी उस कठोर परीक्षा में उत्तीर्ण होते थे, उन्हें ही प्रवेश देता था और उसका उपनयन संस्कार करता था। छात्रों से अपेक्षित व्यवहार था कि वह कर्मठ हों, प्रबुद्ध हों, आज्ञाकारी हो, उसका जीवन वेदानुकूल हो, जिज्ञासु हों।

तान् उशतो वि बोधय। ऋग0 1/12/4 जो जिज्ञासु हो, वेदादि का ज्ञान प्राप्त करने के इच्छुक हो उन्हें ही शिक्षा दें–

- अप्नस्वती मम धीरस्तु। ऋग0 10/42/3

छात्र के लिये आवश्यक है कि वह कर्मठ हो। जिसकी बुद्धि सक्रिय है वही ज्ञान का अधिकारी है।

- शिक्षेयस्मै दित्सेयम् मनीषिणें, ऋग. 8/14/2

जे छात्र प्रबुद्ध और तीव्र बुद्धि वाला होता है उसी को गुरू उच्च शिक्षा देना चाहता है।

- मा नो निद्रा ईशत मोत जल्पिः। ऋग. 8/48/14

छात्रों के लिये निर्देश हैं कि आलस्य, प्रमाद, नींद और अनावश्यक बोलना छोड़ें।

- ब्रह्माचारी समिधा मेखलया श्रमेण लोकान् तपसा पिपर्ति अ0 11/5/4

अथर्ववेद के अनुसार शिष्य में चार गुण होने आवश्यक है जिससे वह सबको संतुष्ट कर सकता है। समिधा–नियमित यज्ञ के द्वारा तेजस्वी होना। मेखलाः कटिसूत्र धारण करना यह दृढ़–निश्चय और अध्यवसाय का प्रतीक है। श्रमः–कठिन परिश्रम करना 4. तपस – तपस्वी या तमोमय जीवन व्यतीत करना।

- विप्रा ऋतस्य वाहसा अ0 20/138/2

शिक्षितो का उत्तरदायित्व है कि वे सत्य का प्रचार करें।

विद्या अध्ययन केन्द्र– वैदिक काल में शिष्य गुरू के घर, जिसे 'गुरूकुल' कहा जाता था, शिक्षा ग्रहण करते थे। गुरूकुल भी आश्रम को कहा जाता था। गुरूकुल में प्रवेश का अभिप्राय गुरू के आश्रम में प्रविष्ट होना था। आश्रम का अर्थ है जिसमें श्रम ही श्रम है। आलस्य का कोई स्थान नही, जिसमें हर समय सजग, सचेष्ट रहना होता है, जिसमें लगन ही लगन है। बालक के गुरूकुल में प्रवेश के समय जो उपदेश दिये जाने थे, उसका मूल आधार तपस्या है। उसे कहा जाता था कि कर्म कुरू, दिवा मा स्वाप्सी, कोधानृपे वर्जय उपरि शैय्यां वर्जय, अर्थात कर्म करते रहना, श्रम का जीवन बिताना, निठल्ले नही रहना, दिन में नही सोना, क्रोध नही करना ब्रह्मचार्य–तप से जीवन की साधना करना तपस्या की आग से गुजरकर ही मानव बना जा सकता है।

शिक्षण विधियाँ :– वैदिक साहित्य में मुख्यतः मौखिक विधि का उल्लेख प्राप्त होता है। वेदमन्त्र, मौखिक विधि से पढ़ाये जाते थे, मौखिक ही अर्थ बताया जाता था। गुरू स्वर, छन्द आदि का ज्ञान कराकर एक–एक पद शिष्यों को सुनाता था, जिसे वे ठीक उसी प्रकार दुहराते थे। कठिन पद आने पर, आचार्य उसका अर्थ शिष्यों से पूछता था, यदि वे बता दें तो आगे बढ़ता था अन्यथा स्वयं उसे स्पष्ट करता था। इस ढंग की शिक्षा में आत्मीयता प्रधान थी। स्मरण शक्ति अत्यन्त प्रबल होती थी। अर्थ समझने तथा सिद्धान्तों के बताने में विशद् टीका की जाती थी। आवश्यकतानुसार उपमा, उत्प्रेक्षा, कहानी आदि की सहायता ली जाती थी।

शंका – समाधान :– इसके अन्तर्गत शिष्य जटील, गूढ़ अस्पष्ट तथा संदिग्ध सिद्धान्तों तथा तथा भागों पर प्रश्न करते थे। आचार्य ''स्मृति चन्द्रिका'' में शिक्षण के निम्नलिखित सोपानो'' का उल्लेख है –

1. शुश्रूषा 2. श्रवणम 3. ग्रहणम 4. धारणम 5. उहापोह (शंका समाधान) 6. तर्क–वितर्क 7. ज्ञान की वास्तविक प्राप्ति

महाभारत में उल्लेखित है कि –

चतार्भि : प्रकारै विधोपयुक्त भवति।

आगम कालेन स्वाध्याय कालेन प्रवचन कालेन व्यवहार कालेनोति।।

महा0 अ0 1/01/1

विद्या चार प्रकार से आती है – आगम स्वाध्याय, प्रवचन एवं व्यवहार

आगमकाल उसे कहते है जिसमें मनुष्य सावधान होकर ध्यान देकर, पढ़ाने वाले से विधा ग्रहण कर सके। स्वध्यायकाल उसे कहते है जब पठन–समय में आचार्य के मुख से, जो शब्द अर्थ सम्बन्ध की बाते ग्रहण की हो उन्हें एकान्त में स्वस्थ्य चित होकर, विचार कर, हृदय में ठीक–ठीक दृढ कर सके। प्रवचन काल वह है जिसमें दूसरे को प्रीति से विद्या प्रदान करना। व्यवहार काल वह होता है जब यह करना है, यह नही करना है, ठीक–ठीक सिद्व करके, वैसा ही आचारण करना हो सके।

वैदिक साहित्य में प्रश्नोत्तर विधि, वाद–विवाद विधि, करो एवं सीखो विधि, परियोजना विधि का भी उल्लेख प्राप्त होता हैं।

वैदिक साहित्य में शिक्षा के संम्प्रत्य, शिक्षा के उद्देश्य, शिक्षक, विद्यार्थी, शिक्षण विधियाँ, विद्या अध्ययन के केन्द्र अर्थात गुरूकुल आदि के सम्बन्ध में विस्तृत चर्चा की गयी है एवं ज्ञान के महत्व पर प्रकाश डाला गया है। वैदिक एवं उत्तर वैदिक शिक्षा व्यवस्था में इन्हें व्यवहारिक स्वरूप भी प्रदान किया गया था। वर्तमान में भी ये व्यवस्था, विचार प्रासंगिक है। यदि हम वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में भी इन्हें लागू कर सके तो, निसन्देह, शिक्षा के क्षेत्र में आमूल–चूल परिवर्तन होगा जो हमारे देश को ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र में, उसकी पुरानी प्रतिष्ठा वापस दिला सकेगा एवं भारत पुनः विश्व गुरू की उपाधि प्राप्त कर सकेगा।

संदर्भ सूची

1. अग्रवाल, जे0सी0, भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास (2010), शिप्रा पब्लिकेशन, दिल्ली।
2. बलवन्त, राणा, भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास (2014), श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
3. पाण्डेय, रामशकल, भारत में शिक्षा व्यवस्था का विकास(2008), अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
4. रावत, प्यारे लाल, भारतीय शिक्षा का इतिहास (1972), रामप्रसाद एण्ड सन्स, आगरा।
5. श्रीवास्तव, के0सी0, प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति (2000), युनाइटेड बुक डिपो, इलाहाबाद।